भगवत् कृपा

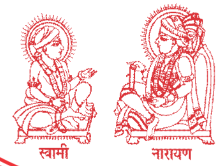

THE DIVINE GRACE

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली मासिक सत्संगपत्रिका

वर्ष-2, अंक-6-7	सम्पादक : साधु मुकुंदजीवनदास गुरु ज्ञानजीवनदासजी	वार्षिक चन्दा-15.00
बुधवार, 12 जुलाई' 78	मानद सहसम्पादक: श्री महेन्द्र दवे-श्री विमल दवे	प्रति अंक : 1.25

कृपावतार स्वामिश्री सहजानंदजी

करिष्ये वचनं तव ...

दो एक साल के बाद की बात है। महाराज को कच्छ जाना था। रास्ते में भादरा गांव में वे विराजमान थे। उनको सुंदरजी की बात स्मरण में थी। अतः उन्होंने भादरा से विदाई लेने के पूर्व सुराखाचर, अलैयाखाचर, अमरापटगर आदि.... आदि....के नाम लिखकर 18 सम्पन्न क्षत्रिय परिवारों को चिट्ठी लिखी। इस में स्पष्ट निर्देश दिया था की यह चिट्ठी पढ़ते ही आप सब 'जेतलपुर' चले जाना। वहां पू. रामदासभाई स्वामी के पास दीक्षा लेकर साधु बन जाना और वहां से काशी होकर हमारे पास भुज आ जाना। दूसरी चिट्ठी इन्होंने रामदासभाई स्वामी को लिखी कि सुराखाचर, अलैयाखाचर, अमरापटगर आदि 18 हरिभक्त आयेंगे। इन सबको संन्यासदीक्षा देना और साधु के गेरुए कपड़े पहनना। किन्तु इनको काशी नहीं जाने देना। इन सब को लेकर आप हमारे पास भुज आना। हम सुंदरजी के घर में मिलेंगे।

जिन क्षत्रिय परिवारों को चिट्ठी लिखी थी वे सब के सब महाप्रभु सहजानंदस्वामी को सर्व अवतार के अवतारी मानते थे। अतः इनके एक शब्द से सर्वस्व समर्पित करने के लिए तत्पर थे। इन हरिभक्तों को महाराज के प्रति पूर्ण श्रद्धा थी। अतः जब त्यागी होने के-प्रवृत्तिमय जीवन को छोड कर निवृत्तिमय जीवन को अंगीकार करने की इन की आज्ञा हुई तब इन्होंने एक क्षण की भी देरी नहीं की और चिट्ठी पढ़ते ही सब छोडकर निकल पड़े। 'कडु' गांव के एक कल्याणजीभाई थे, वह तो शादी करने जा रहे थे। इन्होंने चिट्ठी पढी। इस में उसका नाम नहीं था, किन्तु महाराज ने आदि-आदि लिखा था, इस 'आदि' में मैं भी आ गया ऐसा मान कर शादी अलंकरण में ही वह भी सब के साथ निकल पड़े।

महाराज भादरा से निकल कर भुज आ गये। कुछ ही दिनों में ये नये परमहंसों की मंडली रामदासभाई स्वामी के साथ भुज पहुँच गई। महाराज ने खुद दंडवत् प्रणाम करते हुए सब का स्वागत किया और बाद में सुंदरजी को इन्हीं का परिचय देते हुए कहा, 'इन में से कोई 5, कोई 25

और कोई 50 गांव के अधिपति है और हमारा आज्ञापत्र पढ़ कर बिना कुछ सोचे समझे साधु होकर आये हैं। सुंदरजी का गर्व खंडन हो गया। महाराज के शब्द के मर्म वह समझ गये और बंधिया में उन्होंने जो शब्द महाराज को कहे थे उसके लिये क्षमाप्रार्थना की।

वास्तव में महाराज इन सेवकों को साधु बनाना नहीं चाहते थे। अतः सब को आज्ञा दी कि अब त्यागी का वेश छोड दीजिए। महाराज ने स्वयं उन सबको गृहस्थ के कपडे पहनायें। किन्तु 'कडु' के कल्याणभाई ने कहा कि महाराज मुझे तो अब त्यागाश्रम में ही रहने दीजिए। महाराज ने उनकी प्रार्थना को स्वीकार किया और उनका यह अद्भुत आचरण देखकर उनको 'अद्भुतानंदस्वामी' नाम देकर अनुगृहित किया।

इस प्रकार उनके आश्रित भगवान स्वामिनारायण के एक शब्द और एक इशारे पर अपना सब कुछ समर्पित करने के लिए तत्पर रहते थे। वे श्रद्धा एवं भक्तियुक्त होकर मानते थे की प्रगट प्रभु एक ही है और यह है हमारे स्वामिनारायण।

इस प्रकार सहजानंदस्वामी ने घने अंधेरे में प्रकाश के उज्ज्वल किरण प्रसृत किये। उन्होंने विशुद्ध भागवत धर्म की पुनः स्थापना की और समाज को नवसंजीवनी प्रदान की। अपने अंतरंग मंडली में ऐसे उत्तम आदर्शो को स्थिर करके सहजानंदस्वामी ने अब बाहर के दुर्ग जीतने का प्रारंभ किया। क्रमशः

संस्मृत्य संस्मृत्य............. हृष्यामि च पुनः पुनः

ता. 4-6-78 के दिन प.पू. काकाजी ने 61में वर्ष में प्रवेश किया उसी प्रसंग को निमित्त बनाकर बम्बई में षष्ठीपूर्ति समारोह का आयोजन किया गया था। इस में एक विशिष्ट महापूजा, प.पू. काकाजी के जीवनरहस्य को लक्ष में लेकर 'सुहृद-स्मृति' नामक प्रदर्शनी, सांस्कृतिक कार्यक्रमों आदि का समावेश हुआ था। इस षष्ठीपूर्ति समारोह द्वारा सत्संग-समाज में एक नई चेतना का प्रादुर्भाव हुआ और साधकों के जीवन में एक नया उन्मेज उजागर हुआ। इतना ही नहीं प. पू. काकाजी के मंगलमय संस्मरणों को सुनकर सर्व सत्संगियों को जीवन में एक नया चैतन्यमय पाथेय मिला। इस उत्सव के परिणाम स्वरूप समग्र ब्रह्मसमाज को ब्रह्मकल्लोल प्राप्त हुआ।

विशिष्ट आयोजन बम्बई के सन्मुखानंद हाल में किया गया था। इस अवसर पर पू.प्रेमस्वामी और उनके साथी वर्ग में मंच पर जो कलात्मक संशोधन किया था वह केवल अद्भुत था। 'हाल' के मैनेजर एवं स्टाफ इतने अत्यधिक प्रभान्वित हुए थे की इनके मुख से उद्गार निकल गये : केवल तीन घण्टे के कार्यक्रम के लिये ऐसा भव्य डेकोरेशन ! ऐसा डेकोरेशन इस 'हॉल' के इतिहास में पहली बार हम देख रहे हैं......।

इसी प्रसंग की सार्थकता इस में है की इस के संस्मरण एक लम्बे अरसे तक लोग करते रहेंगे और इससे सर्वदेर्शीय समझ स्थायी रूप से साधकों के हृदय में रहेगी। यह ही है इस पर्व मनाने की एक विशिष्ट फलश्रुति।

प. पू. काकाजी तो है भक्ताधीन, भक्त वत्सल एवं भगवत्स्वरूप ! इन्होंने इस समारंभ निमित्त एक चिरंजीव स्मृति हमें प्रदान की है। विद्यानगर की बालमंडली नाचती हुई मंच पे आई और सुंदर अभिनय गीत प्रस्तुत किया। और मंडली ने जब प.पू. काकाजी को एक हार टोपी और करताल अर्पित किये तब पू. काकाजी ने भी मंच पर इस मंडली के सामने ऐसा ही अभिनय

किया और अलौकिक मूर्ति का दर्शन करवाया और सबको बह्मानंद में मज्ज करवा दिया।

नरसिंह महेताजी (गुजरात के आदि वैष्णव भक्त कवि) की पंक्ति है-

'ऊभो ऊभो गाय त्यां हुं नाचुं रे,
प्राण थकी मुने वैष्णव व्हाला....'

भगवान कहते हैं कि मेरा भक्त जहां खड़ा-खड़ा मेरा गुणगान गाते हैं वहां मैं नृत्य करने लगता हूं। मुझे मेरे भक्त मेरे प्राणों से भी अधिक प्यारे हैं।

पू. काकाजी ने वास्तव में मंच पर सहजावस्था में अपना भक्ताधीनत्व दिखा कर उपरिलिखित पंक्तियाँ चरितार्थ करके दिखाई। कैसा यह पुरुष ! और कैसा था यह दिव्य दर्शन ! किन्तु, सच्चा वैष्णव-सच्चा भक्त ही परमात्मा या परमात्मा के अखंड धारक भगवत्स्वरूप संत के ऐसे चरित्र को दिव्यभाव से देख सकते हैं, गा सकते हैं ! इस प्रकार यहीं भक्तों की भक्ति भी थी। हीरकमहोत्सव ऐसी दिव्य स्मृतियों का भाडांगार है। एक स्मृति भी कोई भक्त जन यत्नपूर्वक अपने स्मरण में रखेंगे, बारबार इस महिमा को संजोये रखेंगे तो स्वामिश्रीजी के संकल्प से आत्यंतिक मोक्ष का वह सहजभाव से अधिकारी बन जायगा।

गुरुपूर्णिमा

गुरुपूर्णिमा (आषाढ़ शुक्ल पूर्णिमा) का दिन भारत के सांस्कृतिक इतिहास में अत्यंत महत्वपूर्ण दिन माना गया है, और आज भी माना जाता है। आध्यात्मिक चर्या जैसे रहस्यमय मार्ग में 'गुरु' का महत्व असाधारण है। कितनी भी शिष्य की सज्जता हो, जब तक गुरु द्वारा शक्तिपात नहीं होता है। हजारों और इससे भी अधिक वर्ष की तपश्चवर्या से प्राप्त नहीं होता है वह गुरु के एक इंगित से व्यक्ति को एक क्षण में प्राप्त हो सकता है। अतः शास्त्रों में लिखा है।

'गुरु र्ब्रह्मा गुरु र्विष्णुः गुरु र्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात्परब्रह्मः तस्मै श्री गुरवे नमः।।

अर्थात्-साधक के लिए ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर शंकर अपने गुरु ही है। गुरु ही साक्षात्-प्रत्यक्ष परब्रह्म है। अतः गुरु को नमन हो।

'अज्ञान तिमिरान्धस्य शान्तञ्जन शलाकया।
चक्षुरुन्मिलितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः।।

अज्ञानरूपी अंधेरे से अंध हुई आंख को ज्ञानरुपी अञ्जन की शलाका से खोल देने वाला गुरु को नमस्कार। यह है गुरु का चमत्कार ! इस प्रकार गुरु की महिमा व्यक्तिजीवन में असाधारण है। इस महिमा को सुस्थापित करने के लिये भारतीय मनीषीओं ने गुरुपूजन के लिए एक दिन निश्चित किया। वह है गुरुपूर्णिमा का दिन। इस दिन को गुरु विशेषरूप से शिष्यों को नई प्रेरणा प्रदान करता है। इस दिन शिष्यगण अनेक भावनाओं को लेकर गुरु के पास पहुँच जाते हैं और श्रद्धापूर्ण होकर गुरुभक्ति-गुरुसेवा करने का संकल्प करते हैं। किसी किसी स्थूलरूप से गुरु को कुछ न कुछ समर्पण करते हैं। अन्य सूक्ष्म प्रकार से। सब की एक ही अभिप्सा है-गुरु का पूजन कर इनके आशीर्वाद प्राप्त करना। किन्तु जब तक गुरुपूजन का असली रहस्य हम नहीं समझते तब तक हमारे जीवन का सर्वतोमुखी विकास संभावित नहीं है। सच्ची गुरुभक्ति का अर्थ क्या है? दूसरे शब्दों में सच्चा गुरुपूजन किसे कहा जाता है? इसको समझने की अत्यन्त आवश्यकता है। गुरुभक्ति में 'भक्ति' शब्द है। 'भक्ति' और प्रेम वास्तव में पर्यायवाची शब्द है। प्रेम परा काटी पर पहुँचता है, तब वह भक्ति है।

सूत्रों में लिखा है-

'सा तु परमप्रेम रुपा।'

सा अर्थात् भक्ति वह है जो प्रेम की परम चरम बिन्दु है। प्रेम जब आत्यंतिक कोटि पर पहुंचता है तब वह समर्पण में बदल जाती है और तब व्यक्ति अपना सर्वस्व समर्पित करता है। अपना भौतिक, मानसिक एवं भावात्मक अस्तित्व भी समर्पित करता है। 'स्व' का लोप कर देता है और गुरु के साथ संपूर्ण ऐक्य की अनुभूति करता है। तब इसको कहते है-एकांतिकी निर्हेतुकी भक्ति ! यहां प्रेम और श्रद्धा का अद्‌भुत समन्वय होता है। व्यवहार मात्र नष्ट हो जाता है। 'मैं' विगलित हो जाता है। 'मेरा विगलित हो जाता है। एक तू ही-तू ही पुकार शिष्य का समग्र अस्तित्व करता है। सब अपेक्षाएं इस भूमिका में नष्ट हो जाती है। गुरु की प्रसन्नता में अपनी प्रसन्नता है। आचरण और विचरण सब गुरु के चरणों में निवेदित हो जाता है,'अपना' कहते हैं वे सब आचरण-विचरण है ही नहीं। उनका संकल्प और अपना संकल्प और उनकी आज्ञा अपना व्यवहार हो जाता है। स्वामिनारायण सम्प्रदाय ऐसी समर्पित एकांगी अशेष भक्ति के अनेक प्रज्ज्वल उदाहरणों से भरा पड़ा है।

सच्चा पूजन क्या ? श्रीजी महाराज ने स्वयं उसको स्पष्ट शब्दों में समझाया है।

(देखिये : वचनामृत वडताल-2)

इस समग्र संसार के कर्ताहर्ता भगवान है। इनको कर्ताहर्ता नहीं स्वीकार करेंगे और 'काल' को, 'माया' को, 'कर्म' को कर्ताहर्ता के रूप में स्वीकार करेंगे या स्वभाव को कर्ताहर्ता मानेंगे तो हम भगवान का द्रोह करते है.....इस प्रकार का जो द्रोह नहीं करते हैं उन्होंने ही भगवान की सम्पूर्ण पूजा की है। इस के अलावा जो (के वल) चन्दन पुष्पादि से भगवान की पूजा करते है वे भी भगवान के द्रोही है।

श्रीजी महाराज के ये शब्द बारबार चित्त में लाने है। 'काल', 'कर्म', 'माया' और 'स्वभाव' को अन्यान्य लोग-चिंतकों भी कर्ताहर्ता मानते हैं श्रीजी महाराज उससे ऊपर उठे हुए हैं और परमात्मा की सत्ता उन्होंने प्रतिष्ठित की है। इस सत्ता का स्वीकार न करना और 'भगवान को मानता हूं' ऐसा कहना यह वास्तव में द्रोह है ईश्वर के ऐश्वर्य को नहीं मानना और 'ईश्वर को मानता हूं' यह कहना यह नास्तिकता है। और कर्ताहर्ता के रूप में ईश्वर को मानने का अर्थ ही समर्पित होना है। वह ही कर्ता है, हम अकर्ता है फिर ममता क्यों, अहम् क्यों ! अहम् की संपूर्ण विनष्टि अर्थात् समर्पण। प्रेम से संपूर्ण समर्पण अर्थात् भक्ति ! ऐसी भक्ति अपने आप में पूजा है।

इस साल में ता. 20 जुलाई और वृहस्पतिवार के दिन गुरुपूर्णिमा है। यह दिन हमारे लिये नया संकल्प लेने का दिन है। कौन-सा संकल्प हम लेंगे? श्रीजी महाराज के शब्द को आदेश मानकर हम संकल्प करें की हमारे जीवन में, हमारे संसार में, हमारे व्यवहार में, हमारे अन्तर में और हमारे समग्र आभ्यान्तर एवं वाह्य जीवन में जो कुछ हो रहा है और होगा इन सब के कर्ता प्रेरक-प्रवर्तक प्रभु के अखंड धारक भगवत्स्वरूप संत के रूप में हमें जो भगवान की मूर्ति प्राप्त हुई है यह ही है। किसी भी प्रकार की आपत्ति आयें किन्तु मेरे स्वामी की इच्छा के बिना एक शुष्क पत्ती भी हिल नहीं सकती है। इस तथ्य को हमारे जीवन में आत्मसात् करने के लिये चलो हम हिलमिल कर गुरुपूर्णिमा का दिन मनायें और अंतर का अर्ध्य देकर सच्चा गुरुपूजन करने के लिये तत्पर हो, ताकि श्रीजी महाराज हमें सर्वोच्च परिपूर्ण फलप्राप्ति करावें।

हीरक जयंति महोत्सव पर्व पर प. पू. काकाजी के आर्शीवचन।

इस महोत्सव को निमित्त बनाकर हम सब

इकट्ठे हुए हैं और आनंद कर रहे है यह शास्त्रीजी महाराज और योगीजी महाराज की कृपा का परिणाम है। आप सब देख रहे हैं कि मैं 60 साल का नहीं लगता हूं। फिर यह षष्ठीपूर्ति कैसी? मैं अपने आपको खूब young मानता हूं और young रहने वाला हूं। क्योंकि मेरे गुरुदेव शास्त्रीजी महाराज 85 वर्ष तक अथक और सतत परिश्रम करते रहे थे; शास्त्रीजी महाराज नित्य युवा थे तो हम इनके सेवक भी नित्य युवा हैं-रहेंगे। आयु कोई महत्त्व की बात नहीं है। उत्साह, spirit, जोश महत्त्वपूर्ण है और इसका मूल है-प्रभु के प्रति आस्तिकता। यदि हर क्षण परमात्मा की सत्ता या अस्तित्व को स्वीकार करेंगे तो परमानंदमय बन जायेंगे। किन्तु हम हैं श्रद्धावान् नास्तिक ! परिणामरूप power आता ही नहीं है। अतः मैंने इस विषय पर तन्त्र का एक ग्रन्थ लिखा है-'The Real Essence of Tantra,' यह ग्रन्थ एक विशिष्ट कोटि का है-नये ढंग से लिखा गया है। हमारे परंपरागत तन्त्र -Traditional Tantras 6000 साल से कुंडलिनी और चक्रों पर चले आयें है। इस ग्रन्थ में मैंने हृदयकमल से अर्थात् परमात्मा के अस्तित्वभाव से प्रारम्भ किया है।

तो, आज का प्रथम सूत्र यह है कि हम जिनको भी मानते हैं इनको अनन्यभाव से-अर्जुन के समान अनन्यभाव से स्वीकार करें। किन्तु इस प्रकार स्वीकार करने में मन पीछे पड़ता है। अर्जुन कैसा भी था श्रीकृष्ण का था। हम भी अर्जुन के समान असाधारण भाव, असाधारण सरलता सचमुच रखेंगे तो प्रसन्नता सहज ही मिल जायेगी यह निश्चित है। किन्तु हम अत्यधिक आत्मछलना करते आये है और अभी भी करतें है। यदि परमात्मा के समक्ष-like a child-खुले दिल से जायेंगे, स्वराट् बनेंगे तो निश्चित सम्राट बन जायेंगे। स्वामिनारायण भगवान ने यह आसान से भी आसान मार्ग स्पष्ट कर दिया है और हमें वरदान भेंट ली है, किन्तु हम इसका स्वीकार नहीं कर रहे हैं। अतः हम दुःख में है। हमारे हृदय में भगवान अखंड है। पप्पा ने कहा कि अपने आपको गुणातीतस्वरूप नहीं मान सकते हो, तो भी मानने का प्रारम्भ कीजिए-यह बात सही है। वास्तव में पू. शास्त्रीजी एवं पू. योगी जी महाराज यह ही सत्य मूर्तिमंत कर गयें है।

आज का दूसरा सूत्र है-I believe in a group, but not in groupism में ग्रुप में मानता हूं, ग्रुपिझम में नहीं। ग्रुपिझम नित्य अंतराय खडे करेंगे, भेदभाव की दृष्टि खडी करेंगे। अतः सम सचेष्ट बन जाना, सब एक ग्रुप में रहना, एक हृदय से रहना। ग्रुपिझम के झूठे पाप में नहीं फंसना। यह ही सोचना की हम सब परमात्मा के है और हिलमिल कर कार्य करना है।

मेरे साथियों को मैं हार्दिक धन्यवाद देता हूं। पप्पाजी, गोरधनकाका, कान्तिभाई आदि ने असाधारण सहकार दिया है और इस पर कलश चढ़ाया स्वामिजी ने। स्वामिजी वास्तव में एक परम पवित्र-निर्गुण पुरुष है और शास्त्रीजी महाराज और योगीजी महाराज ने जो उपकार किये है इसको भूल सकते हैं। इनका ॠण मेरे पर है। जानता नहीं हूं इनके ॠण से कैसे मुक्त हो सकूंगा? युगल-उपासना के ये आधे संस्थापक युगपुरुष थे। इन्होंने जो सहन किया है उसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते है। आपत्ति इन्होंने सही। बेचारे वे रहे। और हमारे पर तो इन्होंने प्रेम ही प्रेम की बारिश की। इन्हीं के सामर्थ्य से इस आध्यात्मिक समाज की स्थापना

हुई है। अब हम सबको इकट्ठे होकर इन्होंने वरदान के जो बीज बोयें है इनका प्रवर्धन करना है और इन्होंने जो सेवा हमें दी है उसको सहजभाव से स्वीकृत करके गुणातीतासमाज में खो जाना है। किसी के गेर व्यवहार को भी प्रेम से लेना। प्रेम से सहन कर लेना। यदि ऐसा करेंगे तो मन आत्मा से अलग हो जायगा। मन का प्रलय हो जायगा। यदि ऐसा नहीं करेंगे और मानसिक भूमिका में ही रहेंगे और तारतम्य में पड़ जायेंगे तो माया परेशान करेगी। यदि आपको आनन्द करना है तो दो अच्छे संत और तीन अच्छे हरिभक्त से मिल कर कार्य करना। एक शक्ति पैदा हो जायेगी।

जब मैं छोटा था तब मेरी भावना थी की स्वर्ग को पृथ्वी पर ले आऊं। किन्तु आज देखता हूं की इस पृथ्वी पर अक्षरधाम उतर आया है। अक्षरधाम क्या है? अंतःकरण की अखण्ड शान्ति, अखंड सुख और शुभ संकल्प ! इस विज्ञानयुग में हम कितने भी प्रवचन करें, भाषण दें, किन्तु यदि हम परस्पर हिलमिल कर एक भावना से, एक सुरुचि से, एक दिल से अभ्युत्थान नहीं करेंगे, एक Platform पर जी नहीं सकेंगे, तो आज का बुद्धिजीवी समाज हमें तृणवत् फेंक देगा। प्रभु सुहृद्‌भावका - प्रेम का समंदर है। इनको सबका सबकुछ अच्छा लगता है। महाराज सूर्य समान है, सबके है। इनको संकुचितता कैसे अच्छी लगेगी? हमें संकुचितता से पर होकर ऊंचे उठना है। महाराज अधिक से अधिक देने को बैठे है। ऐसे परमात्मा हमें मिलें। इनके लिये उदार दृष्टि रखनी होगी। जहां जगत् है, संसार हैं, अंतराय है वहां सद्‌भाव और सत्य टिकता नहीं है।

हमारे गुणातीतसमाज की आधार शिला है- 'सुहृद्‌भाव और साधुता'। मुझे तो लगता है कि जगत् को अपनी आग के शमन के लिये इस तांत्रिक ग्रुप के पास आना होगा, स्वामीजी-पप्पाजी और संतों के पास आना होगा। इस विषय का निश्चिय न हो तो मेरी किताब पढ़ लेना। We have given an open invitation. आपके बोर्डींग और लोजींग भी हम पर, किन्तु आईए तो सही। हम इकट्‌ठे होकर celebrate करें ! क्या celebrate करना है ! इतना ही की अहोहो ! शास्त्रीजी महाराज जैसा भगवान का स्वरूप हमने प्रत्यक्ष देखा ! पीठ पर हाथ लगाकर अक्षरधाम में पहुँचाने वाले योगी बापा हमें मिलें ! भगवान के इन स्वरूपों के साथ सच्चा सम्बन्ध बनायेगे तो मैं मानता हूँ की यह हीरकमहोत्सव सही माने में celebrate किया। एक मन से, सुहृद्‌भाव से, भेदभाव रहित होकर, दिल से हिलमिल कर, कन्धे से कन्धा मिलाकर उठने की सुरुचि रखेंगे यह ही है महोत्सव मनाने का असली तरीका।

हम सब एक पिता की संतति है। प्रमुख स्वामी हो या महन्तस्वामी, हम अलग नहीं है। क्या ग्रन्थि है जिसके कारण यह अलगाव है। मेरी समझ में नहीं आता कि यह अलगाव का कारण क्या है? मैं तो मानता हूं स्वामिनारायण भगवान को सही रूप से समझने में ही किसी प्रकार की हमारी भयंकर गलती होगी......जो कुछ हो, मेरी तो यही अभिलाषा है कि आप सबका प्रेम स्वीकार कर सकूं, आप सबके चरणों में सेवक के रूप में रह सकूं, आप सब की सेवा कर सकूं।

वास्तव में मैं दिल से मानता हूँ संतों ने 'बापा' के नाम को धन्य बनाया है। संतों ही बापा की परम शोभा है। ऐसे संघर्ष में भी इन सब के चेहरे हंसते रहे। यह प्रेमस्वामी और यह

पुरुषोत्तमस्वामी ने मुझे हरा दिया। 6 मास में जो काम नहीं हो सकता था वह कार्य इन संतो ने एक मास में कर के दिखाया। मुकुंद स्वामी दासस्वामी, राजू और शर्माजी ने मेरे ग्रंथ के लिये अथक प्रयत्न किये। किसी ने नींद नहीं देखी। संतों ने मेरे दिल को अत्यंत आश्वस्त किया है।

एक आध्यात्मिक समाज की स्थापना हो चुकी है। अब हमें मानसिक एवं भावात्मक भूमिका से ऊपर उठना है। समुद्र से बाहर निकल कर चिदाकाश में-दिव्य एकता में प्रवेश करना है। समुद्र को मर्यादा है, चिदाकाश को ऐसी किसी भी प्रकार की मर्यादा-limit नहीं है। वहां नित्य शुद्ध केवल प्रेम है। ऐसे अद्भुत सम्बन्ध में हम सब रहे यह ही आकांक्षा है। सरलता और साधुता से हम धन्य बनेंगे। निश्चित मैं एक शूरा योद्धा हूं। मैंने कभी हार नहीं देखी है। हारूंगा भी नहीं। क्योंकि 'हार' शब्द मेरे शब्दकोष में dictionary में है ही नहीं। और अब कहां से आयेगी? मुझे अनेक साथी मिले है। असाधारण सहकार मिला है। अनेक प्रकार से मेरी उपेक्षा भी हुई है और इस बात को मैं समझता भी हूँ। तब भी आज एक बात इस स्थल से घोषित करता हूं कि आप सब में जो कु छ अच्छा है वह आपके पास हो और आप सब के पाप और कष्ट और दिक्कत और गलतियाँ मुझे दे देना। आप सब इन दुःखों से मुक्त हो और सुख में हो। किन्तु पुनः गलती नहीं करना। क्या गलती? परमात्मा का स्मरण कीजिए, संतों का स्मरण कीजिए और बाद में अपना कार्य कीजिए। मैं तो कहता हूं ग्यारह बार उनका स्मरण करके अपना कार्य कीजिए। मेरी 60,000 माला जपने का पुण्य आपको मिले। यह ही है आज सम्राट स्वामिनारायण भगवान के चरणों में मेरी प्रार्थना। सम्राट स्वामिनारायण का शासन अर्थात् प्रेम का शासन, करुणा का शासन समर्पित करने का शासन चलो, हम सब मिलकर अभ्युत्थान करें। मेरी एक भावना है की हम सब मिलकर महाप्रभु का द्विशताब्दी महोत्सव करें और गुरुहरि शास्त्रीजी महाराज और योगीजी महाराज के स्वप्न सिद्ध करें। महाराज की द्विशताब्दी के बाद इस भारतभूमि का भाग्य उज्जवल होने वाला है। भारत के कार्यकर्ताओं में जो संकुचितता और ईर्ष्या रखेंगे उनको भगवान अपने आप ऊंची प्रेरणा देंगे।

पुनः आप सबने मेरे में भरोसा रखा है इसके लिये धन्यवाद। किसी भी प्रकार की कमी रह गई हो तो वह मेरी कमी है। किन्तु आप अपने अन्तर को निश्चित पूछना कि आप सचमुच सन्त के हो? या फिर मन, बुद्धि और चित्त के हो ! आपको बड़ा शून्य Zero दिखाई पडेगा। उस शून्य में से प्रकाश हो जाय और उस प्रकाश से हम सब हिलमिल कर कार्य करें और आगे बढ़े।

अन्त में, आज जो ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है वह बहोत Costly हैं किन्तु इसके पीछे सारा संसार पागलहोने वाला है, यह भी ख्याल में रखना; क्योंकि यह एक वास्तविक तथ्य है-एक reality है। मुझे यदि पूछा हो कि आपने भगवान का दर्शन किया है तो मैं तो डंके की चोट पर श्रीराम-कृष्ण परमहंस के समान कहूंगा, 'हां' ! दर्शन किया है और जिन जिन को दर्शन करना हो इनको -सबको मैंने open invitation दिया है और यह न सन्तों के प्रताप से। मेघदूत के बादल बात करें इस प्रकार शास्त्रीजी महाराज ने कल्पना के तरंग नहीं चलायें हैं। हमें उनकी बात को व्यापक बनानी हैं। अक्षर और पुरुषोत्तम का सम्प्रदाय विश्वधर्म है। विश्वधर्म रहने वाला है। हम इसके पात्र बनें और हिलमिल कर कार्य करें। पुनः सब को धन्यवाद।

❋ ❋ ❋

'Dadubhai' A Wonderful Personality and Essence of Tantra

You know, I have formally released this book (The Real Essence of Tantra) for its publication just now, as I have been asked to do. I have written also a foreword to this book, That is why I was asked to come here and release it. I have read this book in it's manuscript stage and I have written a foreword. I found it highly interesting, though, I have read many books on Tantra, Vedanta and other systems of philosophies in India, Dadubhai, as rightly said by the professor (Shri Kashyapjee) who spoke just before me, has hit a right point And what is that point? Normally Tantra is Generally indentified with Agamas, You know all these Agamas and Nigamas. Agamas are all 'Ishwer Bhashyatam'. The God Shankara Himself has revealed these Agamas, therefore they are called Agamas i.e. coming from the mouth of the Lord, as was described by Bhashyakars. Nigamas are the revelations by Rishis. Let us not forget, Bhagvad Gita is both. It was told personally by Lord Krishna to Arjuna, therefore, Agama, It was further told by sanjaya to Dhritrashtra or by Vyasa to the whole world, so it is Rishi bhasyatam also, Dadubhai has relied on the conception of Purushottama, as taken it from Bhagvad Gita, But mainly he is not a person who goes through the jumble of words, but he lives that life, has tried to live in his life, just as the 'assence of Tantra' was handed over to you not by the books but by line of tradition which Nandaji just now described before you. I knew him for the last few years and was very glad to hear from Nandaji that these small boundries of the sect will not pay, Ultimately essence of Tantra, Vedanta or whatever it may be is stretching out of these small boundries.

Dadubhai is a wonderful personality, I must tell you. Since I started or cultivated friendship with him, you see him now stting on the Gaddi, but I have seen him working like a volunteer just in the same mood as he is sitting now. I have not seen the slightest difference when he worked as a volunteer, when he sits on the Gaddi. His conduct with the small boys who worked with him, his discussions with learned scholars, his giving a talk to the audience, I have seen him in the same mood throughtout. How did he attain that? He is now working in a particular sect-Swaminarayan sect as it is called. But my first comradeship with him was built up in Swami Ramtirtha centenary, which was not a Swaminarayan panth at all! But I found him working with the same zeal-that's what Nandaji told me just now and told you all.

So, in his Tantra also he has hit at the right point. The normal traditional Tantras, many times are misunderstood as being identified with the Shaktas. That is not correct at all. Many times we identify this Tantra Shastra along with the Shaktas. Shaktas are some elements of sex or something like realisation through

sex. But that is not all. There is an another very big branch of these Tantras. It is 'Samayikas' as they call it. Its a very big science. This is neither the forum nor the occassion to tell you all these; but you will find that samayikas have their big Tantras. Look at the big book 'Tantraloka' by Abhinava Gupta. Therefore, What I said, Dadubhai has understood the traditional aspect of the Tantra correctly and taken it to a higher level. In one word I may tell you, the real essence of Tantra which he has propounded is 'recognition of the Transcendental', because Tantra itself does not connote any dualism at all. The only descent of Tantra on this earth-how it came?-

गुरु शिष्यपदे स्थित्वा तन्त्रम् समवतारयत्।

The one God Himself played the role of the teacher as well as the taught or a disciple and the Tantra came down to the world. This idea of totality is behind all these Tantric thoughts. The word 'Mantra' means मननात् त्रायते इति मन्त्रः that which protects you from the evil forces in the world is 'Mantra'. मननात् त्रायते- by speculating,it protects you from the evil forces. Similarly, Tantra-तननात् त्रायते-Spreading out-putting that thought into action means to realise the highest Reality and is a sort of a Tantra.

Many are the ways to reach the God. The summit of a mountain-many many are the ways to it. Gita is the best known book in the world for this. Gyaneshwar maharaj has said-

गीता अर्थाते सांगाये मोक्षोपाये पर आगवे।

The one best thing in the Gita is that the book is full of means for realisation. Not only a philosophy, but it is full of means. All sorts of yogas, Tantras-everything is contained in Bhagvad Gita. Dadubhai has hit at the right point as I said, he pointed out to us. Tantra many be, as I said, concerned with so many means for the realisation of the Lord, but as he has said and directed to, the Transcendental is the essence of all these Tantras. **If you fail that, you fail everything.** This point has been dealt with in these seven chapters. I have read them very carefully. I have given that essence in one word only here, but in my foreword, whatever I feel about the book I have written it. I hope the people-the aspirants especially will go through this, -the general public also, They will get the light on this most important aspect of the human life, because the fulfilment of the human life is to reach the highest development of man. Highest development is such-man recogonises the transecendental; not only it conducts your whole life through the grace of that-through the grace of that Lord itself!

Dadubhai got these experiences, gave expression to these and written this book. I now recommend this book to all, especially the aspirants, Wish a long cherished life of public service to our Pujya Dadubhai, who sits here. Some body told me, it is not alone, it is not sufficient to get ourselves engrossed into these religious things.

In India there has come about this realisation. Dadubhai is already working in that field, He has a large army of volunteers. He is starting schools, starting hostels, starting Ayurvedic hospitals. Public service is the last ultimate thing as Nandaji put it. Ultimately that is the result of this highest realisation. In India, today, you will find all religious sects for that matter. I have come to this conclusion not only that it is their real message, going everywhere you will find have started the public service in this way or that way. Dadubhai is also one of them. He has a large army of volunteers. With the help of them he has started so many projects. So two good things: the bhajan that was sung here gave two things, first सरलता — Straight-forwardness and secondly सेवकता-a mind to serve, an inclination to serve is the correct description of Dadubhai this way or that way. Now I recommend this book once again to your and formally declare it released and I conclude.

-The Speech of
Shri V.S. PAGE
(Former Speaker, Maharashtra State Legislatie Council
On the occasion of felicitation function of
Pujya Shri Dadukakaji

व्रतोत्सवसूची

1.	दि.	16.7.78	रविवार	देवशयनी एकादशी, निर्जला व्रत; आज चातुर्मास के विशिष्ट नियम लिये जाते है
2.	दि.	20.7.78	गुरुवार	गुरुपूर्णिमा
3.	दि.	30.7.78	रविवार	कामिका एकादशी, व्रत
4.	दि.	6.8.78	बुधवार	नागपंचमी, गुरु श्री कृष्णजी अदा का प्राकट्य दिन।
5.	दि.	13.8.78	रविवार	नवमी, श्रीस्वामिनारायण जयंती
6.	दि.	15.8.78	मंगलवार	पुत्रदा एकादशी व्रत; भारत स्वातंत्र्यदिन

The genuine guru is God's representative and he speaks about God and nothing else.....................whatever God says, the Guru repeats. He does not speak otherwise.

-A.C. Bhaktivedanta Swami
Prabhupada.

साधु मुकुंदजीवनदास गुरु ज्ञानजीवनदास जी द्वारा योगी डिवाईन सोसाईटी,
ए-103, अशोक विहार-III, दिल्ली-110052 फोनः 518838
मुद्रण स्थानः ठक्कर प्रिटिंग प्रेस, 2588, बस्ती पंजाबियान, सब्जी मण्डी, दिल्ली-110077